International Journal of Multidisciplinary Education and Research
ISSN: 2455-4588; Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.in
Volume 2; Issue 1; January 2017; Page No. 20-24

शंकरदेव के बरगीतों के राग पर आधारित गीतों का अध्ययन

जयन्त कुमार बोरो

अस्सिटेन्ट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, कोकराझार गवर्मेन्ट कॉलेज, कोकराझार, असम, भारत

सारांश

शंकरदेव के बरगीत को शास्त्रीय परम्परा के दृष्टिकोण से भी देखा एवं परखा जा सकता है। शंकरदेव भक्तिकाल के समय के एक प्रतिभावान कलाकार रहे हैं। जिन्होने असमीया गीति साहित्य के साथ नाट्य साहित्य को भी एक नयी दिशा प्रदान किया। बरगीत उनके जीवन का सार तत्व कहाँ जा सकता हैं। क्योंकि बरगीतों के पदों में आध्यात्मिकता, संगीतात्मकता के साथ-साथ जीवन को सार को भी उसमें समाहित कर भक्तों को रसामृत से तृप्त करवाया हैं। जो बरगीत की प्रधान विशेषताओं से में से एक हैं।

मूल शब्द: शास्त्रीय, परम्परा, गीति साहित्य, आध्यात्मिकता, संगीतात्मकता इत्यादि।

परिचय

शंकरदेव असमीया साहित्य में जिस नाम से परिचित है वह इस प्रान्तीय साहित्य के लिए गौरव का विषय रहा हैं। भक्तिकालीन साहित्य परम्परा से ले करके अब के समस्त असमीया साहित्य के लिए वे आदर्श का प्रतीक हैं। उनके द्वारा लिखित साहित्य ने असमीया साहित्य को विश्व साहित्य के दरबार में एक अग्रणी स्थान को दिलवाया हैं। शंकरदेव मात्र एक भक्त ही नहीं अपितु वे एक प्रतिभा सम्पन्न कलाकार, नाटककार के रुप में भी चिन्हित हैं। भारतीय भक्ति आन्दोलन के समय में असम में प्राचीन वैष्णव धर्म धारा में एक क्रांतिकारी परिवर्तन कर सम्पूर्ण असमीया जनता उपकृत किया हैं। उनके ही अथक प्रयास के परिणामस्वरुप प्राचीन ब्राह्मण्यवाद को सर्वसाधारण के लिए सुलभ करवा कर वैष्णव धर्म और भक्ति के मार्ग सभी के लिए खोल दिये। उनके द्वारा प्रचारित धर्मधारा को नव वैष्णव धर्म और उनके भक्ति मार्ग के सिद्धान्त को ही एकशरण नाम धर्म के रुप में जाना जाता हैं।

उद्देश्य

शंकरदेव असमीया साहित्य के मुर्धन्य वैष्णव भक्त कवि है। शंकरदेव ने अपने भक्त मार्ग को चलाने के लिए निर्गुण भक्ति का सहारा लिया। शंकरदेव का भक्ति मार्ग निर्गुण तो है परन्तु वह वैष्णव भक्ति पर प्रतिष्ठत है। शंकरदेव ने अपनी रचना विशेषकर 'बरगीत' में विविध प्रकार के रागों को समाहित कर असमीया गीति साहित्य जगत को एक अनुपम उपहार प्रदान किया हैं। असमीया साहित्य में बरगीत का महत्वपूर्ण स्थान रहा है और जो सदैव रहेगा।

शोधविधि

प्रस्तुत लेख की विषय वस्तु के अध्ययन के लिए विश्लेषणात्मक पद्धति को अपनाया गया है तथा यह विषय समीक्षात्मकता एवं ऐतिहासिक पद्धति की भी मांग रखता है।

शोध सामाग्री

प्रस्तुत आलेख की शोध सामाग्री विविध प्रकार के लेखों और साहित्य के सर्वेक्षण के आधार पर प्राप्त किया गया गया है। असमीया साहित्य के विविध ग्रन्थों में से आलेख को पुरा करने के लिए काफी मद्द मिली है। शंकरदेव के द्वारा लिखित 'बरगीत' को प्रमुख रुप से अध्ययन के लिए चयन किया गया है।

मूल आलेख

ईश्वर की अराधना, आध्यात्मिक आग्रह या उसके प्रति अनुराग उत्पत्ति करने के लिए भक्त जिस कंठाचारण का प्रयोग करते है उसे ही राग 1 कहाँ जाता है। महापुरुष श्करदेव ने अपने बरगीत में तेरह (13) प्रकार के रागों का प्रयोग किया हैं।

1. आशोवाली, 2. कल्याण, 3. केदार, 4. गौरी, 5. तुरबसन्त, 6. धनश्री, 7. वसंन्त, 8. मल्लार, 9. माउर धनश्री, 10. श्री, 11. सुहाई, 12. भूपाली, 13. अहिर आदि।

शंकरदेव के शिष्य माधवदेव ने भी अपने बरगीतों में विभिन्न रागों का प्रयोग किया हैं। वैष्णव मठों (सत्र) इमन, एमत या केमत, मंजुरी, धूपाली, पाहारी, मध्यावली आदि जैसे रागों के प्रयोगों को देखा जाता हैं।

असम के वैष्णव सत्रीय परम्पराओं के गायन-रीति में रागों के प्रयोग को अति गम्भीरता से देखा जाता हैं। रागो के प्रयोग के लिए कलाविधि को भी मान्यता दिया जाता हैं। रागों के प्रयोगों को विविध कलाविधि में रखा जाता हैं। जैसे-

(क) भौर- प्रातः बेला में साधारणतः धूपाली और पूर्वीराग का प्रयोग बरगीत में किया जाता हैं।

(ख) उषाकाल- अहिर, कौ, कल्याण, श्याम श्याम गौड़ा, ललिता आदि रागों के प्रयोग का प्रचलन हैं।

(ग) दोपहर- केदार, गान्धार, तुरवसन्त, धनश्री, वसंत, कड़ारी, भटियाली, मान्हार, श्री, श्री धनश्री, श्री गान्धार राग के गीतों को गाने का प्रचलन हैं।

(घ) संध्या और रात्रि बेला से पूर्व- आशोवाली, कनारा, केदार, नाट-मल्लार, मल्लार, सारंगी, सुहाई, सिन्दुरा इत्यादि रागों का प्रयोग सत्रों (वैष्णव मठ) में प्रयोग करने की प्रथा प्रचलित है।

रागों पर आधारित शंकरदेव के भाव परक गीत

उपर्युक्त रागों के विषय में संगीतज्ञों ने यह मत दिया है कि ये राग किसी न किसी कार्य संगति में योगदान देते हैं।

1. आशोवाली राग- आशोवाली राग को सांसारिक-विषय वासनाओं, धन-दौलत, भोग-विलास आदि से मुक्ति या निवृत्ति की प्राप्ति के उद्देश्य से गाया जाता है। शंकरदेव और माधवदेव के अपने बरगीतों में आशोवाली राग के श्रेष्ठ उदाहरण को प्रस्तुत किया है। दृष्टव्य स्वरुप में उनके प्रयुक्त राग के गीत को देख सकते है-

शंकरदेव के बरगीत- राग- आशोवाली

ध्रुव- जय-जय यादव जलनिधिजाधव धाता।
श्रुतमात्रखिलत्राता स्मरण करय सिद्धि
दीनदयानिधि भकत-मुकुति पददाता।।

पद- जगजन-जीवन अजन-जनार्दन
दनुजदमन दुखहारी

महादानन्दकन्द परमानन्द
नन्दन्दन बनचारी।।
विविध विहार- विषारद शारद
इन्दु निधि परकाशी।
शेषनयन- शिव केशीविनाशन
पीतवसन अविनाशी।।
जगतबन्धु बिधु माधव मधुरिपु
मधुर मूरुति मुरनाशी।
केशवचरण सरोरुह-किंकर
शंकर एहु अभिलाषी।।

अर्थात् प्रस्तुत बरगीत के पद में शंकरदेव ने जय-जय शब्द का पुनरुक्ति रुप में प्रयोग कर प्रारम्भ किया है। जय शब्द में श्रेष्ठ, प्रकाश, और व्याप्त का भाव को निहित किया है। श्री विष्णु ही एकमात्र सम्पूर्ण सृष्टि का उद्धार करता है। उसी का स्मरण मात्र से सिद्धि की प्राप्ति होती है। वहीं दीन-दुखियों का दया का आधार है और भक्तों को मुक्ति प्रदान करने वाले है। प्रभु विष्णु ही सभी प्राणियों के उद्धार कर्ता है। वहीं भक्तजनों को अभय प्रदान करता है। विष्णु ही एकमात्र गुणयुक्त नाम है। इसीलिए उसकी जय जय कार करते हुए, उसके नाम के जीवित रखना चाहिये।

2. कल्याण- जीवन के कल्याण के लिए भगवान के चरणों में प्रस्तुत किये गये प्रार्थना स्वरुप राग को कल्यान राग कहा जाता है।
शंकरदेव के बरगीत - राग- कल्याण

ध्रुव- उद्धव बन्धु हे, मधुपुरी रहल मुरारु।
कोहे नाहेरि रहब अब जीवन
वन भयो भवन हामारु।।
पद जाहे वियोग-आगि अंक तावय
तिल एकु रहत्र नपारि।
सोहि ब्रजसूर दूर गयो गोविन्द
दिश दश दिवसे आन्धारि।।
भयो मरण उहि सोहि हरि चरणुक
विछुरि रहत्र नपाई।
देखत कालिन्दी गिरि विरिन्दावन
तनु मन दहय सदाइ।।
ब्रजजन जीवन बाहुरि नाहि आवत
हामारु करत अनाथा।
गोपिनी प्रेम परोशि नार झुरय
शंकर कह गुणगाथा।।

3. केदार- संसार रुपी कुएँ में पड़कर जीवन जी कर जो कठिनता प्राप्त किया है उससे मुक्ति के लिए जीव जिस राग का प्रयोग भगवान के चरणों में करता है उसे ही केदार राग कहाँ जाता है।
शंकरदेव के बरगीत- राग- केदार

ध्रुवः पावे पिर हरि करोहो कातरि
प्राण राखबि मोर।
विषय विषधर विषे जड़ जड़
जीवन नारहे थोर।।
पदः अथिर धन जन जीवन यौवन
अथिर एहु संसार।
पुत्र परिवार सबहि असार
करबो काहेरि सार।।
कदम दल जल चित चंचल
थिर नोहे तिल एक।
नाहि भयोभव भोगे हरि हरि
परम पद परतेक।।
कहतु शंकर ए दुःख सागर
पारा करा हृषिकेश।
तहु गति, मति देहु श्रीपति
तत्व पंथ उपदेश।।

संगीतात्मकता के दृष्टिकोण से प्रस्तुत बरगीत में केदार राग है। हे हरि! मैं तुम्हारे पैरों में पड़कर विनम्र भाव से प्रार्थना करता हूँ कि आप मेरे प्राणों की रक्षा करना। क्योंकि मैने भौतिक सुखों को भोगने में अपना सब कुछ खो दिया है। सांसारिक मोह-माया और विषय वासना रुपी विषेले सर्प ने मुझे जकड़ कर एकदम चेतना शून्य बना दिया है यदि आपकी कृपा नहीं हुई तो मेरे जीवन का कोई अस्तित्व नहीं रहेगा। शंकरदेव ने इस पद के द्वारा संसार को क्षणभंगुर और सभी सांसारिक वस्तुओं को धन-दौलत, मनुष्य का जीवन, यौवन, घर, पुत्र, परिवार, सगें-सम्बन्धी सभी को मुल्यहीन बताया है। कवि लोगो के समक्ष उदाहरण रखते है कि जिस प्रकार कलम के फूल की पत्तियों पर पानी ठहर नहीं सकता। ठीक इसी प्रकार मनुष्य का मन भी चंचल और अस्थिर है, कहीं भी क्षण भर के लिए ठीक से नहीं रह सकता। संसार की भौतिक वस्तुओं की प्राप्ति ही परमार्थ समझना लेना मुर्खता है। कवि शंकरदेव कहते है कि मनुष्यों को संसारिक दुःखों से ईश्वर ही पार करा सकता है। वे पद के अंत कहते है कि अब मेरे मन में सांसारिक वस्तुओं के प्रति न कोई इच्छा-आकांक्षा है और न ही किसी प्रकार का भय रह गया है। भोग-विलास में कोई विश्वास नहीं रहा। हे हरि! तुम मेरे मन को ऐसी भक्ति दो कि मैं तुम्हारे उपदेश पर चलकर परम तत्व को प्राप्त कर सकुँ।)

4. गौरी- ईश्वर के नाम की महिमा की घोषणा और भगवान के प्रति गम्भीर अनुराग प्रकट करने के लिए जिस राग का प्रयुक्त किया जाता है उसे ही गौरी राग कहाँ जाता है।
शंकरदेव के बरगीत- राग – गौड़ी (गौरी)

ध्रुव नाहि नाहि रमया बिने पापतारक कोई।
परमानन्द-पद-मरकन्द सेबहु मन मोई।।
पद तीरथ बरत तप जप जाग योग जगुति।
मन्त्र परम धरम करम करत नाहि मुकुति।।
मातु पितु पतनी तनय जनय सब मरणा।
छाड़हु धन्ध मानस अन्ध धरतु परिचरणा।।
कृष्णकिंकर शंकर कह विछुरि विषय कामा।
रामचरणे लेहु शरण जप गोविन्दक नामा।।

5. तुर वसन्त- तुर से अभिप्राय है शीघ्र घटित होना। वसन्त से सौन्दर्य के वर्णन की भाँति ईश्वर के प्रति अनुराग की अभिलाषा से शोक की भावना को दूर करने के दृष्टि से से जिस राग को गाया जाता है उसे ही तुर वसन्त राग कहाँ जाता है।
शंकरदेव के बरगीत- राग- तुरवसन्त

ध्रुव- कहरे उद्धव कह प्राणेर बान्धव हे
प्राणकृष्ण कबे आवे।
पुहुये गोपी प्रेम आकुल भावे।।
(ए) नाहि चेतन गोवे।।
पद- बाँसुरी ध्वनि शुनि गो-बत्स पेखि।
लागे आगे गावे उद्धव सखि।।
कालिन्दी देखी सखि फुटय बुक।
एथाए खेलाईछिल से चान्द मुख।

हरिल नयन सुख।।
बिरिन्दावन बैरी बामर भेलि।
पेखिते ना बिछुरों गोपाल केलि।
धवज बज्र जब पंकज चाई
तथाए कान्दो हामु

6. धनश्री- जो राग ईश्वर की ज्ञान की ज्योति को प्रकाशित करवाता है, उसे ही धनश्री राग के नाम से जाना जाता हैं।
शंकरदेव के बरगीत- राग- धनश्री

ध्रुव- मन मेरि राम चरणहि लागु।
तहे देखुना अन्तक आगु।।
पद- मन आयु क्षणे क्षणे टुटे।
देखु प्राण कोन दिने छुटे।।
मन काल अजगरे गिले।
जान तिलेके मरन मिले।।
मन निश्चय पतन काया।
तई राम भज तेजि माया।।
मन ईसब विषय धान्धा।
केन देखि नदेखस अन्धा।।
मन सुखे पार कैसे निन्द ।
तई चतिया चिन्त गोविन्द ।।
मन जानिया शंकर कहे।
देख राम बिना गति नहे।।

7. वसन्त- सांसारिक विषय-वासना, कामना आदि से निवृत्ति तथा मन की प्राकृतिक (नैसर्गिक) शान्ति की पुनः प्राप्ति के लिए जीवन के प्रति जो उपदेशात्मक भावना रहती है, उसे प्रकाशित करने की भावना को ही वसन्त राग कहाँ जाता है।
शंकरदेव के बरगीत- राग – बसन्त

ध्रुव- कैसे नरहरि तरन उपाय ।
नाश सकल कइलों विषय लुभाइ।।
पद- अथिर जीवन धन यौवन देह।
सुहृद सोदर सुत किछु नोहे केह।
पेखिते अमिया रस विष परिणाम।
तथित्र मजाइलो मन मेरि राम।।
निरमिल विषबिन्धु कामिनि लोहे।
तासु परल मेरि ए मन मोहे।।
ताकर छोड़ाइते सख नाहे थिक।
गरुवा मनोरथ बाढ़ल धिक।।
जनमे जनमे हामु दासकु दास।
केशव सबहु छोड़ह मोह-पाश।।
शमयक लाइ जीव बर डोर।
शंकर कह हरि सेवक तोर।।

शंकरदेव ईश्वर के सम्मुख प्रार्थना करते हुये कह रहे है कि हे नरहरि हे विष्णु मुझे पापो से उद्धार पाने का उपाय कैसे मिलेगा ? सांसारिक विषय वासनाओं पड़ कर मैने अपना सब कुछ नष्ट कर दिया है। शंकरदेव आगे कहते है कि एस संसार में यौवन, धन, दौलत, शरीर सभी कुछ अस्थिर है। भाई, पुत्र, मित्र आदि परिजन तथा सहृद आदि कोई भी हित साधक नहीं हैं देखने में ये सारे अमृत के समान लगता है लेकिन इसका अंतिम परिणाम बड़ा भयंकर होता है। हे राम मैने अपना तन-मन उसी मे ही मग्न कर दिया है। कामिनी के प्रति उत्पन्न लोभ भी बिम्बफल की भाँति भयंकर हुआ। अब मेरे पास शक्ति नहीं है कि मैं उसे छोड़कर मुक्त होकर चला जाऊ। गर्व के प्रति मन की कामना ही अधिक बढ़ता गया। जिसे धिक्कार देने योग्य है संसार के रंग-ढंग के प्रति मेरा मन हमेशा लगा रहा। और मेरे मन को बाह्य कामनाओं ने ही पल-पल जकड़े रखा। उससे मुक्त हो पाना असम्भव हो गया। पद के अंत में शंकरदेव भक्त कवि शंकरदेव ने अपने मन को आत्मसमर्पन के मार्ग की ओर बढ़ाते हुये कहते है कि – हे हरि, हे प्रभु, मैं हर जन्म में तुम्हारे दास का भी दास बना रहुँगा। जीवन भर तुम्हारा ही स्मरण करता रहुगा। जीवन की शांति के लिए मेंरा मन व्याकुल हुआ जा रहा है। हे केशव मुझे सांसारि मोह-माया की सभी बन्धनों से मुक्ति दिला दो।

8. मल्लार राग- भगवान के सर्वांग अलंकरण गे साथ विचित्र अंगों का सर्वगुण वर्णन करने वाले राग को ही मल्लार राग कहाँ जाता हैं।
शंकरदेव के बरगीत-¬ राग- नाटमल्लार

ध्रुव मधुर मुरुति मुरारु।
मन देख हदये हामारु।
रुप अनंग संगे तुलना
तनु कोटि सरुय उजियारु।।
पद मकर कुण्डल गणु मन्डित
खण्डित चान्द रुचि स्मित हासा।।
कनक किरीटि जरित रतना नव
नीरज नयन नीकाशा।।
चतुर उझार कर-कंकण केयूर
भजमह मोतिम हारु।
लीला बिनोदी कम्बु कौमुदी
चक्र केरि कंजधारु ।।
श्याम शरीर रुचिर पीत अम्बर
उरे वनमाला लुले।
कौस्तभ शोभित कन्ठ कटि कांची
किंकिनी कनया डोले।
अरविन्द निन्दि पाव नव पल्लव
रतन नूपुर परकाशा।
भकत परम धन तोहे मोजक मन
शंकर एहु अभिलाशा।।

9. मान्हर या माउर धनश्री- मान्हार शब्द का अर्थ है आवाहन करना। जीवात्मा परमात्मा से विछिन्न हो कर अनुताप प्रकट करने वाले राग को ही मान्हर या माउर धनश्री कहाँ जाता हैं।
शंकरदेव के बरगीत- राग- मान्हर

ध्रुव गोपीनी प्राण काहानु गयो रे गोविन्द।
हामु गोपिनी पुनु पेखबो नाहि आर
सोहि बदन अरविन्द।।
पद कमन भाग्यवती भयो रे सूपरभात
आजु भेटव मुखचन्दा।
उगत सूर दूर गयो रे गोविन्द
भयो गोपवधु अन्धा।
आजु मखरापुरे मिलब महेत्सव
माधव साधव मान।
गोकुलक मंगल दूर गयो, नाहि
बाजत बेनु विषान।।
आजु जत नागरी करत नयन भरि

मुखपंकज मधुपाना।
हामारि कंक विधि हाते हरल निधि
कृष्णकिंकर रस भाणा।

10. भूपाली- इस राग में भव संसार त्याग करने की बात उल्लेखित हैं। भव सागर में लिप्त या पड़कर चिन्तित प्राणियों के प्रति उपदेश राग ही भूपाली राग हैं।
शंकरदेव के बरगीत- राग- भूपाली

ध्रुव विरहे आकुल गोपी हामारु निमिउ।
झुरे नयनक नीर थिर नोहे चिउ।।
पद माधव कहय उद्धव धरि हात।
कह मोहे गोपिनीक सन्देश बात।।
जानय नाहि गोपि मोहि बिने आन।
देहु बोध उद्धव गोपिक रहु प्राण।।
नाहि सुदृदय मोहे गोपीक समान।
तारहे दुख शुनि छुटे मोर प्राण।।

11. सुहाइ राग- सुहाइ का अर्थ है आकर्षण करना। ईश्वर के प्रति जीवात्मा का मन आकर्षित कराने वाले राग को ही सुहाइ राग के नाम से जाना जाता है।
शंकरदेव के बरगीत- राग – सुहाइ

ध्रुव श्रीराम मइऐ हरि पापी पामरु
तेरि भावना नाई।
जनम चिन्तामणि काहे गयो
जैसे काचक लाई।।
पद दिवस विषयें वियाकुल निशि शयने गोवाई।
मन धन खोजि विमोहित तेरि आरति नपाई।।
हृदय-कमले हरि बैठह चिन्ता चरण ना तेरि।
करल गरल जैसे भोजन हामु आमिया हेरि।।
परम मुरुख हामु माधव एकु भकति न जाना।
दास दास बुलि तारहु एहु शंकर भाना।।

हे श्रीराम!, हे हरि! मै बड़ा ही मुर्ख हूँ, इसीलिए मैं तुम्हारी भक्ति से हमेशा दूर रहता हूँ। चिन्तामणि रुपी जीवन को मैने काँच जैसी तुच्छ वस्तु के लिए कैसे खो दिया? सारा दिन विषय-वासना के भोग की चिन्ता में व्याकुल रहता हुँ और सारी रात निद्रा में ही गुज़र जाती है। धन-दौलत की खोज में मन मोहग्रस्त रहता है, तुम्हारी भक्ति की बात सोचने के लिए समय ही कहाँ शेष रह जाता है? विषय-वासनाओं में मग्न होकर उसी में अपने मन को लगा रखा है। हे हरि तुम मेरे हृदयकमलों में विराजमान हो, तब भी मैं तुम्हारे चरणों की सेवा बारे में नहीं सोचा है। विष को ही अमृत समझ कर पान करता आ रहा हुँ। हे माधव मैं बहुत ही मुर्ख हूँ। तुम्हारी भक्ति के विषय में कुछ भी नहीं जानता। अन्त में शंकरदेव यहीं कहते है कि हे प्रभु! अपने दास का भी दास समझकर मेरा उद्धार कीजिए।

12. श्री राग- श्री राग में ईश्वर का रुप दर्शन कर जीवन से मुक्ति प्राप्त करने की कामना से प्रयुक्त किया जाता हैं।
शंकरदेव के बरगीत- राग – श्री

ध्रुव गोपाल कि गति कैले
गोविंदे कि मति दिले
नाथ हे विफले बयस सब गेलेरे।
पद एभव गहन बन अति मोहपाशे छन्न
तोते हामु हरिण बेराइ।
फन्दिलों मायार पाशे काल व्याध धाया आसे
काम क्रोध कुत्ता खेदि खाय।।
हराइल चेतन हरि नजानो किमते तरि
गुनिते दगध भैल जीव।
लोभ मोह दोहों बाघ सतते नछाड़े लाग
राखु राखु सदाशिव।।
पलाइते नेदेखों सन्धि दिने दिने दृढ़ बन्दी
भैल मन्द मनर जुगुति।
तुवा हरि लागों गोड़ मोर माया पाश छोड़
शंकर करय काकूति।।

हे भगवान! मुझे किस विकट में परस्थिति में डाल दिया। प्रभु ने मुझे किया गति प्रदान किया किया। हे नाथ मेरा सारा जीवन विफल हो गया। यह संसार एक गहन बन की भाँति है जहाँ पर मोह-माया फैला कर रखा हुआ है। उसमें घुम-फिरते रहने के कारण हिरण की भाँति जाल में फस कर रह गया हूँ। काल रुपी व्याध (शिकारी) मुझे दौड़ा रहा है, और काम-क्रौध रुपी कुत्ते भगा कर खाया जा रहा है। हे हरि ऐसी अवस्था में चेतना खो कर निष्क्रिय हो गया हुँ। कैसे उससे उद्धार प्राप्त होगा। यह मुझे पता नहीं। उसी बात को सोचते-विचारते हुये मेरा हृदय दग्ध हुआ जा रहा है। लोभ और मोह दोनों बाघ की तरह मेरा शिकार करने के लिए पीछा किये हुये है। हे तारण कर्ता प्रभु एसी विपत्ति से मेरी रक्षा कीजिए। मुझे सांसारिक मोह-माया रुपी फंदे से मुक्त होने का कोई उपाय नहीं दिख रहा है। दिन-व-दिन दृढ़ता पूर्वक मैं उस माया रुपी फन्दे में फसता जा रहा हूँ। और मन की विचार शक्ति भी क्षीण होता जा रहा है। अंत में शंकरदेव प्रभु के सम्मुख विनय पूर्वक प्रार्थना कर रहे है कि- हे हरि मैं तुम्हारे चरणों में पड़ कर उसे पकड़ लिया हूँ और मोह-माया आदि जाल से मेरा उद्धार कीजिए।

13. अहिर- अहिर

ध्रुव गोविन्द- शुन मन लागि।
सुमरिते तनु जले आगि।।
पद मधुपुरी माधव पिऊ।
कैछे धरव अब जीऊ।।
निशि सब बञ्सोहो जागि।।
भेलि माधव बधभागी।।

उपसंहार

बरगीत के सूर बड़े ही ध्यान देने योग्य है। आध्यात्मिक विषयवस्तु से सम्मिलित होने के कारण बरगीत के सूर, राग, ताल के नियम से बन्धे हुये हैं। कला विषारद श्रीमतं शंकरदेव और कंठ शिल्पी श्री के विषय बस्तु को ध्यान में रखते हुये इन गीतों को संगीत के आधार संयोदन कर दिया जाता हैं। श्री कृष्ण के बाल रुप और लीला के पारमार्थिक चित्र और आध्यात्मिक भाव तथा प्रसंग के आधार पर गाम्भीर्य बरगीत के सूरों में परिलक्षित होता है। समस्त बरगीत भक्ति रसात्मक शास्त्र के सूर, ताल, लय और छंदोबद्ध हैं।

बरगीत में भक्ति रस केन्द्र में हैं। करुण और शान्त रस के मध्य बरगीत में भक्ति रस प्रवाहित हुआ है। बरगीत में प्रमुख रुप से छः रसों को स्वीकार करने की बात सामने आती हैं। जैसे- विरह, विरक्ति, चोर, चातुरी, लीला और परमार्थ इत्यादि। बरगीत में प्रयुक्त विविध रस की अभिव्यक्ति की व्याख्या कुछ अन्य प्रकार से भी की जा सकती हैं। जैसे- विनय और भक्ति रस में आशोवाली राग, करुण रस में केदार और धनश्री राग, धीर रस में श्री और भूपाली राग, गाम्भीर्य रस में नाट् मल्लार राग, भक्ति रस में गौरी और सुहाइ राग, अद्भुत रस में वसन्त तथा मधुर रस में लिए भैरवी राग निरुपित हुआ हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ

असमीया:

1. वर्मन, शिवनाथ, सम्पादक, प्रथम संस्करण, जून- 1991, शंकरदेव, असमीया साहित्यर बुरंजी, प्रकाशकः आनन्दराम बरुवा भाषा-कला संसकृति संस्था, उत्तर गौहाटी – 30, असम।
2. महन्त, बापचन्द्र, द्वितीय संस्करण, अक्टूबर- 2012, प्रबन्ध गानर परम्परागत बरगीत, प्रकाशकः बनलता, नतुन बजार, डिबरुगढ़ – 01, असम।
3. महन्त, बापचन्द्र, सम्पादक, प्रथम संस्करण, अगस्त-1992, बरगीत, प्रकाशकः स्टुडेन्ट स्टोरस, कॉलेज होस्टेल रोड, गौहाटी – 01, असम।
4. शर्मा, कुसुम चन्द्र, प्रथम संस्करण, अक्टूबर- 2004, शंकरदेव साहित्यर आभाख, वैष्णव भक्तिवाद शंकरदेव आरु माधवदेवर साहित्य आलोचना, प्रकाशकः श्रीमती कामेश्वेरी देवी, हेमन्तिका, जापारकुसि, नलवारी, असम।
5. काकति, डॉ. वाणीकान्त, पंचम संस्करण, अगस्त- 2011, बरगीत शीर्षक प्रबन्ध, पुरनि असमीया साहित्य, प्रकाशकः राजेन्द्र प्रसाद मजुमदार, असम प्रकाशन परिषद, गौहाटी– 21, असम।
6. गोस्वामी, साहित्यचार्य जतीन्द्रनाथ, सम्पादक, सप्तम संस्करण-2007, श्रीश्री शंकरदेव रचित कीर्तन-घोषा और श्रीश्री माधवदेव रचित नाम-घोषा, प्रकाशक- ज्योति प्रकाशन, पानबजार, गौहाटी-01, असम।
7. नेउग, महेश्वर, लेखक, श्रीश्री शंकरदेव, अष्टम संस्करण-2006, प्रकाशक- चन्द्र प्रकाश, पानबजार, गुवाहाटी- 01, असम।